International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070
www.socialresearchjournals.com
Volume 1; Issue 1; November 2015; Page No. 30-36

भारत में राष्ट्रीयता का आविर्भाव

Aruna Mittal

Research Scolar, Department of Sociology, University of Delhi, Delhi, India

सारांश
अंग्रेजों के आगमन से पूर्व देष छोटी–छोटी रियासतों में बंटा हुआ था। प्रत्येक शासक अपने राष्ट को उस रियासत तक ही सीमिति मानता था। अंग्रेजों के आगमन के पष्चात् ही भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना का आविर्भाव हुआ। अंग्रेजों द्वारा भारतीय पर ढाए गए अत्याचारों के कारण ही उनमें एकता, राष्ट्रीयता, जनतंत्रवाद तथा समाजवाद की स्थापना हुई। स्वामी विवेकानन्द ने भारतीयों को उनकी प्राप्त भारतीय विद्वानों ने पष्चिमी देषों के साहित्य का अध्ययन किया तो उनमें देष को स्वतंत्र कराने की भावना जाग्रत हुई।

बीज शब्द राष्ट्रीयता आविर्भाव संस्कृति

परिचय

राष्ट्रीयता की भावना भारत के लिये एक नवीन भावना है। जिसका विकास शनेः शनेः हुआ है। इसके आविर्भाव तथा विकास के पीछे एक कटु सत्य कार्यरत है। भारत एक ऐसा देष है जहॉ पर विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों तथा भाषा को बोलने वाले लोग रहते है। यहॉ का समाज विभिन्न धार्मिक विचारों में बंटा हुआ है। भारत की समाजिक, कारण अन्य देषों की तुलना में यहॉ राष्ट्रीयता का उदय बड़ी कठिनाई से हुआ है।

अतः यह कहा जा सकता है कि भारत मात्र एक ऐसा देष है जहां राष्ट्रवाद का उदय उन परिस्थितियों में हुआ जो राष्टवाद के मार्ग में सहायता प्रदान करने के स्थान पर बाधाऍ प्रदान करती है। वास्तविकता यह है कि भारतीय समाज की विभिन्नताओं में मौलिक एकता सदैव विधमान रही है और समय समय पर राजनीतिक एकता की भावना भी उदय होती रही है। वी.ए. स्मिथ के शब्दों में 'वास्तव' में भारत वर्ष की एकता उसकी विभिन्नताओं में ही निहित है। ब्रिटिष शासन की स्थापना से भारतीय समाज में नए विचारों तथा नई व्यवस्थाओं को जन्म मिला है इन विचारों तथा व्यवस्थाओं के बीच हुई क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं के परिणाम स्वरूप भारत में राष्ट्रीय विचारों का आविर्भाव हुआ।

भारतीय राष्टवाद को समझने के लिए उसकी समाजिक पृष्ठभूमि को समझना नितांत आवष्यक है। भारत में अंग्रेजों के आने से पहले गॉव आत्मनिर्भर थे। भारत की ग्रामीण अर्थ व्यवस्था सदियों से कृषि और कुटीर उद्योगों पर आधारित थी साथ ही गांव में विद्यमान पंचायतें ग्रामीण समाज पर नियंत्रण रखती थी। अतः राजनीतिक परिवर्तनों से गॉव की सामाजिक स्थिति पर बहुत कम प्रभाव पड़ा। गांव तथा नगरों में अलग–अलग रहने के कारण देष में अखिल भारतीय राष्ट की भावना उत्पन्न नहीं हो सकी। भारत में जो राष्टीयता की भावना थी वह राजनीतिक व आर्थिक एकता की भावना नहीं थी। लोगों में तीर्थ यात्रा करने के लिए पूर्व से पष्चिम और उत्तर से दक्षिण भारत का दौरा अवष्य करते थे और इससे ही देष में धार्मिक एकता की भावना बनी हुई थी किंतु सारा देष छोटे–छोटे राज्यों में बंटा हुआ था जिनमें आपस में सदैव युद्ध होते रहते थे। जबकि गांव इन राजनीतिक परिवर्तनों से अछूते रहते थे। भारतीय संस्कृति की एकता भी धार्मिक आदर्षवादी एकता है। उसमें राष्टीय भावना का अधिकतर अभाव ही दिखलाई देता है।

भारत में अंग्रेजो के आगमन के पष्चात् मुगलों का पतन हुआ और देष छोटे–छोटे राज्यों में बंट गया। पहले भूमि राजा की नहीं समझी जाती थी उसे जोतने वाला उसे कर दिया करता था। अंग्रेजो के आगमन पर भूमि पर ग्रामीण समुदाय का अधिकार नहीं रहा, बल्कि वह व्यक्तिओं की निजि सम्पत्ति बन गई। इस प्रकार देष के कुछ भागों में जमीदारों और अन्य भागों में किसानों का जमीन पर अधिकार हो गया। लार्ड कार्नवालिस के राज्यकाल में बंगाल, बिहार और उड़ीसा में जमीदार वर्ग का उदय हुआ। इससे ग्रामीण अर्थ–व्यवस्था में दूरवर्ती परिवर्तन हुए देष के अन्य भागों में रैयतवाड़ी प्रबंध से किसानों को उनके द्वारा जोती गई भूमि पर अधिकार दे दिया गया। भूमि के छोटे–छोटे टुकड़े हो गए जिससे वर्ग का उदय हुआ। जिससे परस्वर संघर्ष तथा तनाव बढ़ने लगा।

ब्रिटिष शासन काल में नगरीय अर्थव्यवस्था में भी व्यापक परिवर्तन हुए। कुटीर उद्योगों को धक्का लगा। पारंपरिक उद्योग समाप्त होने लगे कारीगरों का स्तर गिरने लगा। अंग्रेजों ने अपने लाभ के लिए नये–नये उधोगों की स्थापना की। इनके कारण ही पेष में धीरे–धीरे राष्ट्रीयता की भावना को बल मिला। इस समय की अर्थव्यवस्था देष के लिए हानिकारक और अंग्रेजों के लिए लाभदायक थी, दूसरी ओर व्यापार और उद्योग के क्षेत्र में उनका एकाधिकार बढ़ गया।

अंग्रेजों ने देष में एक ऐसे नए वर्ग को जन्म दिया जो अंग्रेजी षिक्षा प्राप्त कर शासन में सहायता दे सके। इससे पहले भारत में संस्कृत पाठषालाओं में तथा मदरसों में षिक्षा दी जाती थी। अंग्रेजों ने अंग्रेजी षिक्षा के माध्यम से भारतीयों को ईसाई बनाने का प्रयास किया। पाष्चात्य षिक्षा के प्रभाव से देष में एक ऐसे वर्ग का निर्माण हुआ जिसने राष्टीय षिक्षा की ओर ध्यान दिया। इसके पष्चात् बनारस में हिन्दू विष्व विद्यालय और अलीगढ़ में मुस्लिम विष्व विद्यालय की स्थापना हुई। देष में अनेक जगह दयानन्द एंग्लो वैदिक विधालयों और कालेजों की स्थापना हुई। इसी से देष में राष्टीयता, जनतन्त्रवाद और समाजवाद की स्थापना हुई।

अंग्रेजों के आगमन से पहले भारत में राजनीतिक तथा प्रशासनिक एकता का अभाव था। अंग्रेजो ने समस्त देष में राजनैतिक और प्रषासनिक दृष्टि से सामान्य व्यवस्था स्थापित की थी। उनके द्वारा बनाए गए कानून राज्य के प्रत्येक नागरिक पर सामान्य रूप से लागू किए गए और एक न्याय व्यवस्था का निर्माण भी किया गया। कानूनी एकता के अतिरिक्त ब्रिटिष सरकार ने प्रषासनिक एकता भी स्थापित की।

अंग्रेजी शासन काल में नए वर्गों का उदय हुआ। यह एक ऐसा वर्ग था जो भारतीय समाज में पहले विद्यमान नहीं था वे पूंजीवादी व्यवस्था के कारण ही उत्पन्न हुए थे। किन्तु देष के विभिन्न भागों में एक ही

साथ इन नए वर्गों का एक ही प्रकार से उदय नहीं हुआ। तथा इन नए बने वर्गों के लोगों के हित आपस में टकराते थे और अपने–अपने हितों की रक्षा के लिए उन्होने अनेक नवीन आन्दोलन छेड़े।

भारत में राष्ट्रवादी भावना के उदय और विकास के अनेक कारण हमारे सामने मौजूद है। भारत में राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द आदि समाज सुधारकों ने अनेक आंदोलन छेड़े। उन्होने भारतीयों को अपनी गौरवमयी संस्कृति की याद दिलाई। उन्होने वैदिक धर्म की श्रेष्ठता को फिर से स्थापित किया और यह बताया कि हमारी संस्कृति विष्व की प्राचीन एवं महत्वपूर्ण संस्कृति है। उनका मानना था कि वेदज्ञान के भंडार है और संसार में सच्चा हिंदू धर्म है, जिसके बल पर भारत विष्व में अपनी प्रतिष्ठा फिर से स्थापित कर गुरू बन सकता है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाष' में निर्भीकता पूर्वक लिखा है, ''विदेषी राज्य चाहे वह कितना ही अच्छा क्यों ना हो, स्वदेषी राज्य की तुलना में कभी भी अच्छा नहीं हो सकता है'' एस. बी. शारदा ने लिखा है कि, ''राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति स्वामी दयानन्द का मुख्य उद्देष्य था। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होने 'स्वराज' शब्द का प्रयोग किया और अपने देषवासियों को विदेषी माल के प्रयोग के स्थान पर स्वदेषी माल के प्रयोग की प्रेरणा दी। उन्होने सबसे पहले हिंदी को राष्ट्रीय भाषा स्वीकार किया।'' स्वामी दयानन्द सरस्वती पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होने यह नारा लगाया कि ''भारत भारतीयों के लिए है।'' इस प्रकार उन्होने भारतीयों की राजनीतिक स्वाधीनता का समर्थन किया जिससे राष्ट्रीय भावनाओं को असाधारण बल मिला।

अंग्रेजी षिक्षा और यातायात के साधनों के कारण भारत में राजनीतिक दृष्टि से एकता की भावना को बढ़ावा मिला। डा. के.वी. पुनिया के शब्दों में 'हिमालय से कन्याकुमारी तक सम्पूर्ण भारत एक सरकार के अधीन था और इसने जनता में राजनीतिक एकता को जन्म दिया। जब भारतीयों को यह पता चला कि पष्चिम के विद्वान भारतीय संस्कृति को श्रेष्ठ मानते हैं, तो उनके मन में आत्महीनता के स्थान पर आत्मविष्वास की भावनाएँ जाग्रत हुई और उन्होने उसकी श्रेष्ठता स्थापित करने का प्रयास किया। भारतीय आषावादी बन गए और अपनी सभ्यता और संस्कृति पर गर्व करने लगे।

अंग्रेजी भाषा के ज्ञान के कारण भारतीय विद्वानों ने पष्चिमी देषों के साहित्य का अध्ययन किया तो उनमें स्वतंत्रता की भावना जाग्रत हुई। षिक्षित भारतीयों ने अमेरिका, इटली और आयरलैण्ड के स्वतंत्रता संग्रामों के सम्बन्ध में पढ़ा। यही षिक्षित भारतीय भारत के राष्टीय आंदोलन के राजनैतिक और बौद्धिक नेता हो गए। अतः सारांष में कहा जा सकता है कि अंग्रेजी षिक्षा भारतीयों के लिए वरदान सिद्ध हुई तथा भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना प्रतिदिन प्रबल होती गई।

संदर्भ ग्रन्थ

1. ई.जे. हॉब्सबॉम, नेषंस ऐंड नेषनलिजम सिंस 1789
2. एस. सेठ, मार्किस्ट थियरी ऐंड नैषनलिस्ट पॉलिटिक्स
3. ए स्मिथ, नैषनलिजम
4. सुनलिनी कुमार, नैषनलिजम

भारत में लोकतंत्र

सारांश– भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्रात्मक देष है यहां पर अप्रत्यक्ष लोकतंत्र सफलता पूर्वक कार्यरत है। यहॉ सभी धर्म, जाति के लोग संविधान की दृष्टि में समान हैं तथा 18 वर्ष की आयु का प्रत्येक नागरिक मतदान का अधिकार रखता है। आजादी के बाद से देष में लोकतंत्र शासन प्रारंभ हुआ है। आजादी के बाद से देष में लोकतंत्र आगे बढ़ रहा है। इस लोकतंत्र में अनेक गुण समाए हुए है तथा इसमें कई दोष भी विद्यमान है। परंतु इसमें मौजूद दोषों के लिए यहॉ की जनता उत्तरदायी है क्योंकि उसी ने अपने मतदान द्वारा भ्रष्ट नेताओं के हाथों में सत्ता सौंपी है।

कूट शब्द– लोकतंत्र, मतदान, नागरिक

लोकतंत्र का शाब्दिक अर्थ है– लोगों का शासन। लोकतंत्र एक ऐसी शासन व्यवस्था है जिसमें जनता अपना शासक खुद चुनती है। परंतु लोकतंत्र अलग–अलग देषों में, अलग–अलग समय पर तथा अलग–अलग परिस्थितियों में अलग–अलग धारणा को लेकर प्रकट होता है। लोकतंत्र के अनेक प्रकार हैं जिनमें भारत में विद्यमान लोकतंत्र लोकतंत्र का सर्वोत्तम रूप है।

इतिहास के पन्नों में पलट कर देखा जाए तो भारत में प्राचीन काल से ही लोकतंत्र विद्यमान है। इसका प्रमाण हमें प्राचीन साहित्य, सिक्कों और अभिलेखों से प्राप्त होता हैं। परन्तु प्राचीन काल के लोकतंत्र और आज के लोकतंत्र में बहुत अधिक अंतर मिलता है। तब सभी को चुनाव प्रक्रिया में भाग लेने का अधिकार नहीं था। परंतु पदाधिकारियों का चुनाव योग्यता और गुणों के आधार पर किया जाता था। किसी भी मुद्दे पर निर्णय लेने से पूर्व सदस्यों के बीच में खुलकर चर्चा होती थी। सही गलत का आकलन तथा विषयों पर बहस होती थी। सबकी सहमति होने पर ही कोई निर्णय लिया जाता था।

आधुनिक काल में सामान्यतः लोकतंत्र शासन व्यवस्था दो प्रकार की मानी गई है। वह शासन व्यवस्था जिसमें देष के सभी नागरिक प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं प्रत्यक्ष लोकतंत्र कहलाता है। यह लोकतंत्र व्यवस्था एक छोटे से समूह के लोगों में ही संभव हो सकता है। वर्तमान युग में राज्यों के विषाल स्वरूप के कारण यह व्यवस्था संभव नहीं है। अतः अप्रत्यक्ष लोकतंत्र ही देषों में कार्यरत है।

भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देष है। भारत का संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ और तभी से भारत में लोकतंत्र स्थापित हुआ । 1950 में लागू संविधान में इसे सार्वजनिक व्यस्क मताधिकार के आधार पर स्थापित किया गया। 15 अगस्त 1947 को नेहरू भारत के पहले प्रधानमंत्री बने और 1964 तक वे प्रधानमंत्री के पद आसीन रहे। 1952 में पहले आम चुनाव हुए जिनमें कांग्रेस पार्टी भारी बहुमत से सत्ता में आई। इससे पहले 1947 से वे अंतरिम प्रधानमत्री थे। नेहरू जी के पष्चात् गुलजारी लाल नंदा, लाल बहादुर शास्त्री तथा इन्दिरा गांधी ने कांग्रेस के प्रतिनिध के रूप में चुनावों में भाग लिया तथा 1966 से 1977 तक इन्दिरा गांधी ने प्रधानमंत्री का पद संभाला।

इस बीच 1975 में आपातकाल की घोषणा की गई। अपने आपातकाल की स्मृतियों में अडवाणी जी लिखते है– ''आज पूरी दुनिया में भारत को सम्मान सिर्फ इसलिए नहीं मिलता कि उसे एक उभरती हुई बड़ी आर्थिक शक्ति माना जाता है अपितु इसलिए भी मिलता है कि विकासषील देषों में से भारत ही एकमात्र देष है जहां लोकतंत्र जीवित और सशक्त ढंग से चल रहा है।''

परंतु आपातकाल के दौरान भारत में लोकतंत्र का हनन हुआ और एकदलीय प्रणाली स्थापित करने का प्रयास किया गया।

तत्पष्चात् 1977 से 1979 तक मोराजी देसाई जो कि जनता पार्टी के थे प्रधानमंत्री बने। उनके पष्चात् जनता दल के ही चौधरी चरण सिंह प्रधानमंत्री पद पद आसीन हुए। 1980 में लोकतंत्र ने पुनः पलटा खाया और फिर 1980 से 1989 तक कांग्रेस की सरकार पुनः स्थापित हुई। 1989 के चुनाव में जनता दल ने सरकार बनाई तथा 1991 तक जनता दल के दो प्रमुख नेता प्रधानमंत्री बने। 1991 से 1996 तक पुनः नरसिंह राव के नेतृत्व में कांग्रेस की सरकार बनी। इस प्रकार यह प्रक्रिया 2014 के चुनावों तक चलती रही। जिसमें अधिकांषतः सरकारें कांग्रेस द्वारा बनाई गई परंतु कांग्रेस के अतिरिक्त जनता पार्टी, जनता दल तथा भारतीय जनता पार्टी ने धीरे–धीरे अपने पांव पसारे।

चाहे केंन्द्रीय स्तर पर देंखे अथवा राज्य स्तर पर भारत एक लोकतंत्र देष है जहॉ सरकारों का चुनाव जनता द्वारा किया जाता है।

भारत के अलावा विष्व के अनेक देषों में लोकतंत्र स्थापित है जैसे– अमेरिका, डेनमार्क, इटली आदि। अगर हम विष्व के स्तर पर लोकतंत्र की परिभाषा करें तथा उसमें समाहित मुख्य मुद्दो पर चर्चा करें तो हम पायेगें कि ऐसे राष्ट को लोकतंत्रात्मक कह सकते है। जहां सभी नागरिकों को मतदान का समान अधिकार प्राप्त हो, सभी देष की गतिविधियों में भाग ले, सभी को अपनी बात कहने का तथा निर्णय लेने का अधिकार हो। जहॉ देष में विद्यमान सभी तबके के लोग देष के समान नागरिक समझे जायें। इस दृष्टि से देखा जाए तो अमेरिका और भारत दो ऐसे देष है जहॉ पर कि देष के सर्वोच्च पद पर आसीन व्यक्तियों के लिये किसी प्रकार का मतभेद नहीं किया गया है।

हमारे देष में लोकतंत्र मजबूती के साथ आगे बढ़ा है और जनता को आजादी से जीने का अवसर मिला है। शासन कोई कितना भी अच्छा क्यों न हो परन्तु हमारे देष के लोकतंत्रात्मक शासन से कोई भी अच्छा नहीं हो सकता है। यह बात अलग है कि हमने जिन्हे सत्ता सौंपी है वे जनता की आकाक्षाओं पर पूरी तरह खरे नहीं उरते है। उन्होने अपने भलाई के काम कम किये जनता की या देष की परवाह नहीं की है। हर तरफ भ्रष्टाचार, अनाचार, हिंसा, लूट, बलात्कार जैसे जघन्य अपराधों का बोलबाला हो रहा है। उसके लिए भी हमारे देष की जनता ही जिम्मेदार है क्योंकि उसने नेता चुनने में समझदारी नहीं दिखलाई है। जब हम वोट डालने जाते है तो या तो जातिवाद में फंस जाते है या फिर तुच्छ स्वार्थ के वषीभूत होकर देष हित को नजर अंदाज कर देते है। आयोग्य उम्मीदवार को वोट डालते है। जनतंत्र या लोकतंत्र में जनता का जागरूक होना आवष्यक है ताकि वे अपनी शक्ति पहचाने और चुनाव के समय सतर्कता से काम ले नेताओं द्वारा किये जा रहे घोटालों और भ्रष्टाचार के कारण जन कल्याण के कार्य ठीक प्रकार से नहीं हो पाते और विकास प्रभावित होता है। परन्तु लोकतंत्र व्यवस्था में जो जनता को अधिकार प्राप्त होते है उनका कोई विकल्प नहीं हो सकता है।

लोकतंत्र के संविधान मं शासित देष की जनता को स्वयं अपने, अपने परिवार, अपने समाज और देष के सामूहिक विकास के पर्याप्त अवसर मिलते हैं कुछ भ्रष्ट और स्वार्थी नेताओं के कारण विकास में देरी तो हो सकती है परन्तु विकास अवष्य होता है। भ्रष्टाचार के कारण कुछ धन नौकरषाही की जेबों में चला जाता है, तो भी वे खर्च भी तो इसी देष में करते है वे देष के गुनाहगार हैं जब देष की दौलत और उत्पादन का लाभ देषवासियों को प्राप्त होता है तो वे गरीब परिवार, मध्यम आय वर्ग की श्रेणी में आ गए और मध्यम आय वर्ग उच्च आय वर्ग की श्रेणी में आ गए अर्थात् आज प्रत्येक परिवार एवं व्यक्ति जीवन शैली में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है।

भारत में जनता का शासन होने के कारण ही सभी धर्मों को अपने धर्म के अनुसार पूजा पद्धति अपनाने और पूजा करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। हमारे संविधान में देष को धर्म निरपेक्ष घोषित किया गया है अतः प्रत्येक धर्म को मानने वाला देष का नागरिक है और मत देने का अधिकारी है। कानून की नजर में सबको समान अधिकार प्राप्त है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. भारत की सभ्यता और इतिहास– आर.सी. मजूमदार
2. भारतीय समाज और उसके आदर्ष– आर.एस.शर्मा
3. भारत का प्राचीन इतिहास– कृष्ण मोहन

अधिगम का चिंतन

सारांष– अधिगम अथवा सीखने की प्रकिृया कभी भी किसी भी आयु में हो सकती है। अधिगम के लिए आवष्यक है अधिगमकर्ता में उस कार्य के प्रति रूचि होना प्रत्ये मानव की कुछ भी सीखने की अपनी अलग क्षमता होती है। अतः सीखने की प्रक्रिया इस बात पर निर्भर करती है कि सीखने वाले में किस प्रकार ग्रहण शक्ति है। वर्तमान युग में अधिगम प्रौद्योगिकी का विकास हुआ है।

बीज शब्द– अधिगम, परिपक्वता, प्रौद्योगिकी

अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अतंर्गत अनुभव से ज्ञान प्राप्त होता है। इसे स्वभाव में सुधार की प्रक्रिया के नाम से भी अभिहित किया गया है। अधिगम एक सक्रिय प्रक्रिया है। यह मात्र पुस्तकों के पठन तथा षिक्षकों के भाषण से प्राप्त ज्ञान नहीं है। इसका क्षेत्र विषाल है तथा यह अनुभवों में सुधार द्वारा ही प्राप्त होता है।

अधिगम की प्रक्रिया विद्यालयी षिक्षण के दौरान एक अहम् भूमिका अदा करती है। जब तक छात्र अधिगम के प्रति रूचि नहीं दिखाएगा तब तक अध्यापकों के द्वारा दिया गया, ज्ञान सफल नहीं हो सकता है। अधिगम के प्रक्रिया में अनुभव तथा अभ्यास का बहुत महत्व होता है। प्रत्येक कार्य से मानव कुछ न कुछ सीखता है जैसे– कि एक बालक किसी कविता को बार–बार दोहराता है तो वह कविता उसके मस्तिष्क में स्थायी हो जाती है। अधिगम की प्रक्रिया के दौरान जो चीजें पहले कठिन लगती थीं वे अभ्यास द्वारा बाद में आसान तथा रूचिकर लगने लगती है।

अधिगम के क्षेत्र के अतंर्गत आता है मानव के स्वभाव में सुधार और उसके पुराने व्यवहार में परिवर्तन। इस प्रक्रिया के अंतर्गत मानव के नजरियें में भी बदलाव आया है। उसके सोचने तथा समझने का ढंग पहले की अपेक्षा अधिक परिपक्व हो जाता है। अधिगम की प्रक्रिया द्वारा कौषलों, अच्छी आदतों का विकास होता है। इससे मानव को सही दिषा मिलती है तथा उसके संवेग उसके नियंत्रण में रहते है। मानव में तभी अधिगम का विकास होता है जब उसमें शारीरिक क्षमता होती है तथा उसको अभिप्रेरित किया जाता है।

अधिगम की प्रक्रिया के विकास में चिन्ह अथवा संकेत भी सहायक होते है। अधिगम एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है इसके अंतर्गत अस्पष्ट तथ्य भी आते है। एक सांकेतिक अधिगम की प्रक्रिया में अधिगम कर्ता का पिछला अनुभव, सामन्य योग्यता और काल्पनिक क्षमता का बहुत महत्व होता है।

अधिगम की प्रक्रिया विभिन्न मनोवैज्ञानिक तथा मानसिक गतिविधियों पर निर्भर करती है। प्रत्येक मानव की कुछ भी सीखने की अपनी अलग–अलग क्षमता होती है अतः सीखने की प्रक्रिया इस बात पर निर्भर करती है कि सीखने वाले में किसी प्रकार की ग्रहण शक्ति है। जिस मानव में जितनी समर्पण की भावना होगी उतनी ही उसके लिए अधिगम की प्रक्रिया आसान बन जायेगी। अधिगम के दौरान मानव एक ही कार्य को बार–बार करता है और असंख्य गलतियां करता है परतुं आखिर में उसे सफलता प्राप्त होती है। इस प्रयोग को मछलियों, कुत्तों, बिल्लियों तथा बंदरों पर अपनाया गया है।

अधिगम के क्षेत्र में शैक्षिक प्रौद्योगिकी अथवा अधिगम प्रौद्योगिकी का एक महत्वपूर्ण स्थान है। उचित तकनीकी प्रक्रियाओं और संसाधनों के सृजन, उपयोग और प्रबंधन के द्वारा अधिगम और कार्य प्रदर्षन सुधार के अध्ययन और नैतिक अभ्यास को अधिगम प्रौद्योगिकी कहते है।

शैक्षिक प्रौद्योगिकी साहित्य में तीन मुख्य सैद्धांतिक स्कूल या दार्षनिक ढांचे उपस्थित रहे हैं। ये हैं व्यवहारवाद, संज्ञानवाद और रचनावाद तीनों वैचारिक स्कूलों में से प्रत्येक आज के साहित्य में उपस्थित है, लेकिन इनका विकास उसी प्रकार हुआ है जिस प्रकार मनोविज्ञान साहित्य का हुआ है।

बी.एफ.स्किनर ने अपने मौखिक व्यवहार के प्रकार्यात्मक विष्लेषण के आधार पर षिक्षण में सुधार पर व्यापक रूप से लिखा था और समकालीन षिक्षा में निहित मिथकों को समाप्त करने के प्रयास में तथा साथ ही अपनी प्रणाली जिसे वे क्रमादेषित अनुदेष कहते थे, का प्रोत्साहन करने के लिए 'द टेक्नोलॉजी ऑफ टीचिंग' लिखी।

संज्ञानवाद विज्ञान ने षिक्षकों के अधिगम के प्रति दृष्टिकोण को बदला है। 1960 और 1970 के दषक में संज्ञानात्मक क्रांति की शुरूआत के बहुत प्रारंभ से अधिगम सिद्धान्त में काफी परिवर्तन आया है। व्यवहारवाद की अनुभवजन्य रूपरेखा की ज्यादातर बरकरार रखा गया भले ही एक नया प्रतिमान शुरू हो चुका था।

रचनावाद एक अधिगम सिद्धान्त है या शैक्षिक दर्षन है जिस पर अनेक षिक्षाविदों ने 1990 के दषक में विचार करना शुरू कर दिया था। इस दर्षन के प्राथमिक सिद्धान्त में से एक है कि षिक्षार्थी नई जानकारी से अपने स्वंय के अर्थों की रचना करते है, जब वे वास्तविकता या भिन्न दृष्टिकोण वाले अन्य लोगों के साथ पारस्परिक क्रिया करते है। रचनावादी अधिगम वातावरण की आवष्यकता होती है कि छात्र अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभवों का उपयोग करके अधिगम की नई, संबंद्ध या अनुकूली अवधारणाएँ तैयार करे।

षिक्षण प्रौद्योगिकी और दूरस्थ षिक्षा के अंतर्राष्टीय जर्नल के कार्यकारी संपादक डोनाल्ड जी पेरिन का कहना है कि सिद्धान्त ''डिजिटल युग में सीखने के लिए एक शक्तिषाली सैद्धान्तिक अवधारणा की रचना के लिए कई षिक्षण सिद्धान्तो, समाजिक संरचना और प्रौद्योगिकी के प्रासांगिक तत्वों को जोड़ता है।''

समस्या आधारित अधिगम और पूछतांछ आधारित अधिगम सक्रिय अधिगम शैक्षिक प्रौद्योगिकी हैं जिनका उपयोग सीखने की सुविधा के लिए किया जाता है।

शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उद्देष्य प्रौद्यौगिकी के बिना षिक्षा की जो स्थिति होती है, उसमें सुधार करना है। अनुदेषक पाठयक्रम सामग्री या किसी पाठयक्रम पर महत्वपूर्ण जानकारी वेबसाइट पर पोस्ट कर सकते हैं, जिसका मतलब है कि छात्र जिस समय या स्थान पर चाहे अध्ययन कर सकता है और अध्ययन सामग्री को शीघ्रता से प्राप्त कर सकता है।

कंप्यूटर आधारित अनुदेष छात्रों को तत्क्षण प्रतिपुष्टि दे सकते हैं और सही उत्तरों की व्याख्या कर सकते हैं। एक कंप्यूटर विद्यार्थी को षिक्षा जारी करने के लिए प्रेरणा दे सकता है। जेम्स कुलिक के अनुसार, जो अनुदेषों के लिए प्रयुक्त कंप्यूटर की प्रभावषीलता पर विचार करते हैं, वे छात्र प्रायः कंप्यूटर आधारित अनुदेष प्राप्त कर के कम समय में अधिक सीख जाते हैं और कंप्यूटर आधारित कक्षाओं में सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। अधिगम सामग्री का दीर्घ दूरस्थ अधिगम के लिए उपयोग किया जा सकता है और यह व्यापक श्रोताओं की पहुंच में होती है।

माइक्रोफोन की मदद से छात्र अपने षिक्षकों को स्पष्ट रूप से सुनते हैं तथा यह अधिगम में सहायक सिद्ध होता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. हैंडबुक ऑफ हयुमन परफॉर्मस टैक्नोलॉजी
2. टैक्सानामी ऑफ एजुकेषनल ऑबजेकटिव्स
3. बी.एफ. अध्ययन के विज्ञान और षिक्षण का कला
4. स्कीनर– द टेक्नॉलोजी ऑफ टीचिंग

बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास

सारांष– बच्चों के संवेगों के विकास से संबंधित जानकारी अध्यापकों तथा अभिभावकों के लिए परम आवष्यक है। जैसे–जैसे बच्चे का विकास होता है उसके संवेगों में परिपक्वता आती जाती है। उसके संवेग पहले की अपेक्षा अधिक स्थिर तथा स्थायी होते हैं। बच्चे के संवेगों के विकास पर समाज तथा विद्यालय का प्रभाव पड़ता है। बाल्यावस्था ही वह समय है। जबकि बालकों के संवेगो को एक दिषा मिलती है। उसके संवेगों में सकारात्मकता तथा नकारात्मका का उदय होता है। अतः बालक की बाल्यावस्था सुखद तथा स्नेह पूर्वक गुजरनी चाहिए।

बीज शब्द– संवेग, शैषवास्था, बाल्यावस्था

कुछ संवेग बच्चों में जन्म से मौजूद होते हैं जिनका विकास एवं पल्लवन बच्चे के बड़े होने के साथ–साथ होता है। षिषु के जन्म के पष्चात् परिवार में उसकी देख–रेख तथा परिवार से प्राप्त प्रेम ही उसके भावी जीवन में एक अहम् भूमिका अदा करते है। अर्थात् षिषु के संवेग उसके पारिवारिक वातावरण से पूर्णतः प्रभावित होते है।

प्रारंभिक अवस्था में जबकि बच्चा छोटा होता है तो उसके संवेगो को घर की चार दीवारी नियंत्रित करती है तथा माता के द्वारा किए गए पालन–पोषण का बच्चे के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। अगर बच्चे की बाल्यावस्था सुखद होती है तो उसका आगामी जीवन सकारात्मक संवेगो से आप्लावित होता है परन्तु बच्चे के बाल्यावस्था में ही अगर माता के प्रेम का अभाव हो या षिषु अगर मॉ के प्रेम से वंचित हो तो इसका असर स्पष्टतः उसके संवेगो में नजर आता है। जैस–जैसे बच्चे का विकास होता है वह विद्यालय समाज आदि के संपर्क में आता है। वहॉ का वातावरण उसे पूर्णतः प्रभावित करता है।

शैषवावस्था में भूख लगने पर, क्रोध आने पर तथा किसी प्रकार की पीड़ा या कष्ट से पीड़ित होने पर षिषु रोकर अपने संवेग अभिव्यक्त करता है। षिषु जोर की आवाज को सुनकर, अनजान चेहरे को देखकर भय को अभिव्यक्त करता है। जैसे–जैसे षिषु बड़ा होता है उसमें हर्ष तथा प्रेम की भावना स्वतः आ जाती है।

जन्म के 6 से 7 महीने के बाद षिषु की योग्यता में विकास के साथ–साथ उसकी क्रियाओं के क्षेत्र में भी विकास होता है और क्रियाओं के क्षेत्र के साथ–साथ उसकी संवेगात्मक क्षमता का भी विकास होता है। षिषु के शारीरिक तथा मानसिक विकास समानान्तर रूप से साथ–साथ चतले रहते है। जैसे–जैसे बच्चा बाल्यावस्था में प्रवेष लेता है वैसे–वैसे उसके व्यवहार में परिवर्तन दिखाई देता है।

बाल्यावस्था में संवेग स्थिर तथा स्थायी होते है। अब वह विद्यालय जाता है तथा विद्यालय में उसके सहपाठी, उसके अभिभावकों का उसके प्रति व्यवहार उसके संवेगों को प्रभावित करता है। घर में बच्चा स्वतंत्र था परन्तु अब विद्यालय में वह अनुषासन में रहना सीखता है। अगर विद्यालय का वातावरण अत्यधिक कठोर होता है तो वह भी उस पर नकारात्म प्रभाव डालता है। उसके मित्रों का उसके प्रति व्यवहार उसके जीवन और संवेगों पर स्थायी प्रभाव डालते हैं।

कई बार देखा गया है कि एक पिछड़ी जाति का अथवा नकारात्म भावों से प्रेरित छात्र विद्यालय जाकर और वहॉ के अच्छे, स्वस्थ तथा सकारात्मक वातावरण से प्रेरित होता है तथा उसमें अच्छे संवेगों का अविर्भाव होता है। जबकि एक स्वस्थ घरेलू वातावरण से निकलकर विद्यालय में अपेक्षित तथा हीन दृष्टि से देखे गए छात्र में नकारात्मक संवेगों उत्पन्न होते है। विद्यालय घर के बाद वह स्थान है जहॉ का परिवेष एक अबोध बालक को ज्ञानी, विद्वान अथवा देष भक्त बना सकता है। अतः विद्यालय के परिवेष में स्वस्थ मानसिक विचारधारा का विकास अवष्यमेव होना चाहिए। विद्यालय का यह दायित्व बनता है कि वह छात्रों में नकारात्मक भावों को पनपने ना दे तथा अध्यापकों को यह प्रयास करना चाहिए कि वे बच्चों के लिए एक मार्ग दर्षक का कार्य करते हुए उन्हे सही मार्ग की ओर अग्रसर करें।

प्रायः यह देखा गया है कि बालकों में क्रोध, भय, ईर्ष्या, जिज्ञासा, हर्ष, स्नेह आदि संवेगों का पूर्णतः विकास बाल्यावस्था में ही हो जाता है। इस समय बच्चों में खेलों के प्रति रूचि बढ़ जाती है वे अधिक समय तक मित्रों के साथ रहकर खेलना चाहते हैं। खेलों के द्वारा उनमें स्वस्थ तथा सकारात्मक संवेगों का उदय होता है। बात–बात पर बच्चों को रोकना, उन्हे डांटना, उन पर अकुंष लगाना उनकी तुलना करना उनमें हीन तथा विरोध की भवनाओं को पनपने देना है। वे ईर्ष्यालु बनने लगते है और धीरे–धीरे उनमें अपने मित्रों के प्रति घृणा की भावना का भी उदय होता है। जबकि बाल्यावस्था में खेलों के माध्यम से उनमें हर्ष, स्नेह आदि संवेगों का विकास किया जा सकता

है। चूँकि बाल्यावस्था के संवेगों का बालक पर अधिक समय तक प्रभाव पड़ता है अतः उसमें क्रोध तनाव आदि नकारात्म संवेगों को बढ़ने नहीं देना चाहिए।

प्रत्येक बालक अपनी क्षमता के अनुसार ही कार्य करता है इसलिए घर विद्यालय तथा समाज को उस पर दबाव नहीं डालना चाहिए। बल्कि उसे प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि वह प्रोत्साहन के माध्यम से अपने सामर्थ्य के अनुसार षिक्षा, खेल आदि जीवन के किसी भी क्षेत्र में अधिक उत्तम परिणाम दिखाए।

बच्चे बड़ों के कठोर या उग्र व्यवहार के कारण उनसे भयभीत रहते हैं परन्तु अभिभावकों तथा अध्यापकों का यह कर्तव्य है कि वे उनसे सख्ती बरतने के स्थान पर उनसे नम्रता तथा स्नेह से पेष आए। भय एक ऐसा संवेग है जो कि बालक में शैषवकाल से ही विद्यमान रहता है यह भय केवल बड़ो तथा अनजान लोगों तक ही सीमित नहीं रहता है अपितु भय किसी जानवर भूत–प्रेत आदि के प्रति भी हो सकता है। छोटे बालकों को डराने के स्थान पर समझाने का प्रयास किया जाना चाहिए। उन्हे जानवरों के प्रति सचेत करना चाहिए। उनके मन में भूत–प्रेत आदि गलत बातों को पनपने तथा बढ़ने नहीं देना चाहिए। अगर उन्हे किसी कार्य के लिये मना करना है तो उन्हे समझा कर मना करना चाहिए ना कि उनके मन में कोई गलत भावना या भय उत्पन्न करके क्योंकि बाल्यावस्था में उत्पन्न इस प्रकार के भयपूर्ण विचारों अथवा बातों का प्रभाव बालक पर नकारात्मक पड़ता है तथा जीवन भर वह इस भय से मुक्ति नहीं पा सकता है। इसलिए बच्चों को डरावनी कहानियॉ नहीं सुनानी चाहिए।

ईर्ष्या एक ऐसी भावना है जो कि परिवार से ही जन्म लेना आरंभ करती है। माता–पिता द्वारा दो बच्चों में किए गए भेद–भाव अथवा छोटे बच्चे पर अधिक ध्यान देने के कारण बड़े बच्चे के मन में स्वतः ही आ जाती है। लड़को की तुलना में लड़कियों में ईर्ष्या की भावना अधिक बलवती पाई गई है।

छोटे बालक में जिज्ञासा की भावना बहुत अधिक होती है। वह प्रत्येक नई वस्तु को देखकर उसके प्रति जिज्ञासु बन जाता है। वह हर नए विषय के संबंध में जानकारी हासिल करना चाहता है। अतः उसकी जिज्ञासा को शांत करना चाहिए। जब बच्चा कोई सवाल पूंछता है तो उसे उसका उत्तर देना चाहिए। यह जिज्ञासा की भावना बच्चे में 3 वर्ष से आरंभ होकर 6 वर्ष तक अपनी पराकाष्ठा तक पहुंच जाती है।

बालक दूसरे बच्चे को चिढ़ाने में जानवरों को सताने में, तथा दूसरों को परेषानी में डालने में हर्ष उत्पन्न करता है। हर्ष को वह मुस्कुराकर, हॅस कर, खिलखिला कर प्रकट करता है।

छोटा सा बालक ना केवल मनुष्यों से स्नेह करता है अपितु वह बेजान खिलौनों से भी प्यार करता है। वे अपनी प्रिय वस्तु अथवा व्यक्ति से चिपके रहना, चाहते हैं, उसे चूमते हैं और सहलाते हैं। इतना ही नहीं वे सोते समय भी अपनी प्रिय वस्तु को अपने पास रखना चाहते है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. दमविली– मनोविज्ञान के सिद्धान्त पृष्ठ–127
2. दैषील– सामान्य मनोविज्ञान के सिद्धान्त पृष्ठ– 550–551
3. गैरीसन– वृद्धि और विकास पृष्ठ 228–229
4. उच्चतर षिक्षा मनोविज्ञान– रामनाथ शर्मा
5. षिक्षा मनोविज्ञान– एच एस सिन्हा

गॉधी और उनके आन्दोलन

सारांष– राष्ट्रपिता महात्मा गॉधी ने देष को स्वतंत्र कराने में एक अहम् भूमिका निभाई है। उन्होने भारतीय जनमानस को सत्य अहिंसा का मार्ग दिखलाया। उनके अहिंसात्मक आंदोलनों के प्रभाव स्वरूप ही अंग्रेज भारत छोड़ कर जाने के लिए मजबूर हो गए। उन्होने नमक बनाया, खादी को बढ़ावा दिया तथा भारतीयों में त्याग की भावना को बढ़ावा दिया। उनके ही प्रयासों के कारण आज भारत स्वतंत्र है।

बीज शब्द– आंदोलन, अहिंसा, संविधान

'गांधी बाबा' 'गांधी महाराज' अथवा सामान्य 'महात्मा' जैसे अलग–अलग नामों से ज्ञात गॉधी जी भारतीय किसान के लिए एक उद्वारक के समान थे जो उनकी उंची करों और दमनात्मक अधिकारियों से सुरक्षा करने वाले और उनके जीवन में मानमर्यादा और स्वायतंत्रता वापस लाने वाले थे। गरीबों विषेषकर किसानों के बीच गॉधी जी की अपील को उनकी सत्विक जीवन शैली और उनके द्वारा धोती तथा चरखा जैसे प्रतीकों के विवेकपूर्ण प्रयोग से बहुत बल मिला। जाति से महात्मा गांधी एक व्यापारी व पेषे से वकील थे, लेकिन उनकी सादी जीवन शैली तथा हाथों से काम करने के प्रति उनके लगाव की वजह से वे गरीब श्रमिकों के प्रति बहुत अधिक सहानुभूति रखते थे तथा बदले में वे लोग गांधी जी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। जहॉ अधिकांष अन्य राजनीतिक उन्हे कृपा की दृष्टि से देखते थे वहीं ये न केवल उनके जैसा दिखने बल्कि उन्हे अच्छी तरह समझने और उनके जीवन के साथ स्वंय को जोड़ने के लिए सामने आते थे।

महात्मा गांधी का जन अनुरोध निस्संदेह कपट से मुक्त था और भारतीय राजनीति के संदर्भ में तो बिना किसी पूर्वोदाहरण के यह भी कहा जा सकता है कि राष्ट्रवाद, के आधार को और व्यापक बनाने में उनकी सफलता का राज उनके द्वारा सावधानी पूर्वक किया गया संगठन था। भारत के विभिन्न भागों में कांग्रेस की नई शाखाऍ खोली गयी। रजवाड़ों में राष्ट्रवादी सिद्धान्त को बढ़ावा देने के लिए 'प्रजा मंडलों' की एक श्रृंखला स्थापित की गई। गॉधी जी ने राष्ट्रवादी संदेष का संचार शासकों की अंग्रेजी भाषा की जगह मातृभाषा में करने को प्रोत्साहित किया। इस प्रकार कांग्रेस की प्रांतीय समितियॉ ब्रिटिष भारत की कृत्रिम सीमाओं की अपेक्षा भाषाई क्षेत्रों पर आधारित थी ।

1917 से 1922 के बीच भारतीयों के एक बहुत ही प्रतिभाषाली वर्ग ने स्वंय को गांधी जी से जोड़ लिया। इनमें महादेव देसाई, वल्लभ भाई पटेल, सुभाष चन्द्र बोस, अबुल कलाम आजाद, जवाहरलाल नेहरू, सरोजिनी नायडू, गोविन्द वल्लभ पंत आदि शामिल थे। गॉधी जी के ये घनिष्ठ सहयोगी विषेष रूप में भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के साथ ही भिन्न–भिन्न धार्मिक परंपराओं से आए थे। महात्मा गॉधी 1927 में जेल से रिहा हो गए और अब उन्होने अपना ध्यान घर में बुने कपड़े, खादी को बढ़ावा देने तथा छुआ–छूत को समाप्त करने पर लगया। उन्होने भारतीयों को स्वावलंबी बनना सिखाया और समुद्र पर से आयतित मिल से बने वस्त्रों के स्थान पर खादी पहनने पर जोर डाला।

1929 में दिसंबर के अंत में कांग्रेस ने अपना वार्षिक अधिवेषन लाहौर में शुरू किया। यह अधिवेषन लाहोर में शुरू किया। यह अधिवेषन दो दृष्टियों से महत्वपूर्ण था। जवाहर लाल नेहरू का अध्यक्ष के पद में चुनाव जो युवा पीढ़ी को नेतृत्व की छड़ी सौंपने का प्रतीक था और 'पूर्ण स्वराज्य' अथवा पूर्ण स्वतंत्रता की उद्घोषणा।

26 जनवरी 1930 को विभिन्न स्थानों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराकर और देष भक्ति के गीत गाकर 'स्वतंत्रता दिवस' मनाया गया। गॉधी जी ने स्वंय सुस्पष्ट निर्देष देकर बताया कि इस दिन को कैसे मनाया जाना चाहिए।

'स्वतंत्रता दिवस' मनाए जाने के तुरंत बाद महात्मा गॉधी ने घोषणा थी कि ब्रिटिष भारत के सर्वाधिक घृणित कानूनों में से एक, जिसने नमक के उत्पादन और विक्रय पर राज्य को एकाधिकार दे दिया है, को तोड़ने के लिए एक यात्रा का नेतृत्व करेंगे। प्रत्येक भारतीय घर में नमक का प्रयोग अपरिहार्य था। लेकिन इसके बावजूद उन्हे घरेलू प्रयोग के लिए भी नमक बनाने से रोक गया और इस तरह उन्हें

दुकानों से उंचे दाम पर नमक खरीदने के लिए बाध्य किया गया। 1930 को गॉधी जी ने साबरमती में अपने आश्रम से समुद्र की ओर चलना शुरू किया। तीन हफ्तों बाद वे अपने गंतव्य स्थान पर पहुंचे। वहॉ उन्होने मुट्ठी भर नमक बनाकर स्वयं को काननू की निगाह में अपराधी बना दिया।

असहयोग आंदोलन की तरह अधिकृत रूप से स्वीकृत राष्ट्रीय अभियान के अलावा भी विरोध की असंख्य धाराएँ थीं। देष के विषाल भाग में किसानों ने दमनकारी औपनिवेषिक वन कानूनों का उल्लंघन किया जिसके जिसके कारण जहॉ एक जमाने में वे बेरोक–टोक घूमते थे। कुछ कस्बों में फैक्टी कामगार हड़ताल पर चले गए वकीलों ने ब्रिटिष अदालतों का बहिष्कार कर दिया और विद्यार्थियों ने सरकारी षिक्षा संस्थानों में पढ़ने से इंकार कर दिया। 1920–22 की तरह इस बार भी गॉधी जी के आह्वान ने तमाम भारतीय वर्गों को औपनिवेषिक शासन के विरूद्ध अपना असंतोष व्यक्त करने के लिए प्रेरित किया। बहुत से लोगों ने सरकारी नौकरियॉ छोड़ दी तथा स्वतंत्रता संघर्ष में शामिल हो गए।

दूसरा गोल मेज सम्मेलन 1931 के आखिर में लंदन में आयोजित हुआ। उसमें गांधी जी कांग्रेस का नेतृत्व कर रहे थे। गॉधी जी का कहना था कि उनकी पार्टी भारत का प्रतिनिधित्व करती है। इस दावे को तीन पार्टियों ने चुनौती दी। मुस्लिम लीग का कहना था कि वह मुस्लिम अल्पसंख्यकों के हित में काम करती है। राजे–रजवाड़ो का दावा था कि कांग्रेस का उनके नियंत्रण वाले भू–भाग पर कोई अधिकार नहीं है। तीसरी चुनौती तेज–तर्रार वकील और विचारक बी. आर.अम्बेडकर की तरफ से थी जिनका कहना था कि गॉधी जी और कांग्रेस पार्टी निजली जातियों का प्रतिनिधित्व नहीं करते।

इसके कुछ समय पष्चात् क्रिप्स कमीषन की विफलता के बाद महात्मा गांधी ने ब्रिटिष शासन के खिलाफ अपना तीसरा बड़ा आंदोलन छेड़ने का फैसला किया। अगस्त 1942 में शुरू हुए इस आंदोलन की अंग्रेजों भारत छोड़ो आंदोलन का नाम दिया गया। हालांकि गांधी जी को फौरन गिरफतार कर लिया गया था लेकिन देष भर के युवा कार्यकर्ता हड़तालों और तोड़–फोड़ की कार्यवाईयों के जरिए आंदोलन चलाते रहे। कांग्रेस में जय प्रकाष नारायण जैसे समाजवादी सदस्य भूमिगत प्रतिरोध गतिविधियों में सबसे ज्यादा सक्रिय थे। पष्चिम में सतारा और पूर्व में मेदिनीपुर जैसे कई जिलों में स्वतंत्र सरकारों की स्थापना कर दी गई। अंग्रेजों ने आंदोलनों के प्रति काफी सख्त रवैया अपनाया फिर भी इस विद्रोह को दबाने में सरकार को साल भर से ज्यादा समय लग गया।

भारत छोड़ो आंदोलन सही मायने में एक जन आंदोलन था। जिसमे लाखों आम हिन्दुस्तानी शामिल थे। इस आंदोलन ने युवाओं को बड़ी संख्या में अपनी ओर आकर्षित किया। उन्होने अपने कॉलेज छोड़कर जेल का रास्ता अपनाया।

फरवारी 1947 में बावेल की जगह लॉर्ड माउंटबेटन को वायसराय नियुक्त किया गया। उन्होने वार्ताओं के एक अंतिम दौरा का आह्वान किया। जब उनके द्वारा सलाह के लिए किया गया यह प्रयास विफल हो गया तो उन्होने ऐलान कर दिया कि ब्रिटिष भारत को स्वतंत्रता दे दी जाएगी। लेकिन उसका विभाजन भी होगा। औपचारिक सत्ता हस्तांतरण के लिए 15 अगस्त का दिन नियत किया गया। उस दिन भारत के विभिन्न भागों में लोगों ने जमकर खुषियॉ मनायी। दिल्ली में जल संविधान सभा के अध्यक्ष ने मोहनदास करमचंद गांधी को राष्टीयता की उपाधि देते हुए संविधान सभी की बैठक शुरू की तो बहुत देर तक करतल ध्वनि होती रही । असेम्बली के बाहर भीड़ महात्मा गांधी की जय के नारे लगा रही थी।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. गांधीवादी दर्षन का संघर्ष– बोंदुरत
2. हिंदी साहित्य में वैचारिक पृष्ठभूमि– डॉ0 विनय कुमार
3. लेखक की बात गांधीवाद की रूपरेखा–सं0 रामनाथ सुमन पृष्ठ 6
4. गांधीवादी हिंदी साहित्य कोष– डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा पृष्ठ–21
5. गांधी और गांधीवाद– डॉ0 पट्टाभि सीता रमैया– पृष्ठ 28

1857 का स्वतंत्रता संग्राम

सारांश– 1857 का स्वतंत्रता संग्राम भारतीयों द्वारा देष को आजाद करने के लिए सम्मिलित रूप में किया गया प्रयास था। इसके मूल के निहित थी अंग्रेजो के प्रति नफरत की भावना। इस संग्राम के लिए अनेक कारण उत्तरदायी थे जिनमें प्रमुख था सैनिकों का कारतूसों के खिलाफ विद्रोह। आरंभ यह सैनिकों में हुआ था परन्तु इसने एक विषाल रूप धारण कर लिया तथा आम जनता ने भी इसमें बढ़–चढ़ कर भाग लिया। हालांकि यह आंदोलन असफल रहा लेकिन इसके अनेक दूरगामी परिणाम निकले।

बीज शब्द– संग्राम, विद्रोह, क्रांति

1857 का स्वंतत्रता संग्राम जिसे लोगों ने अलग–अलग नामों से पुकारा। देष को स्वतंत्र करने के लिए किया गया पहला प्रयास था। किसी ने इसे विद्रोह करार दिया तो किसी ने इसे क्रान्ति कहा। इस बात को बिल्कुल नकारा नहीं जा सकता है कि इसके आरंभ का कारण सैनिकों में विद्रोह था परंतु यही सैनिकों का विद्रोह एक विषाल रूप धारण कर गया और समूचा राष्ट्र इसमें शामिल हो गया।

लखनऊ में यह क्रान्ति की तरह उभरा तो मध्य प्रदेष में आदिवासियों के विद्रोह के रूप में, झांसी का इस विद्रोह में शामिल होने का अपना अलग ही कारण था, तथा कहीं पर यह जाटों व गूजरों के बीच हुए संघर्ष के रूप में उभरा। जो भी हो इस संग्राम के मूल में थी भारतीयों के मन में अंग्रेजों के प्रति घृणा की भावना तथा उन्हे अपने देष से बाहर खदेड़ कर निकालना।

मास्को की एक किताब 'द फर्स्ट इंडियन वार ऑफ इंडिपेंडेंस' में मार्क्स ने लिखा था, ''मौजूदा भारतीय गड़बड़ी एक फौजी बगावत नहीं है बल्कि एक राष्ट्रीय विद्रोह है। सिपाही उसके औजारों की ही भूमिका अदा कर रहे हैं।'' मार्क्स ने इस विद्रोह की तुलना 1789 की महान फ्रांसीसी क्रांति से की थी। उसके अनुसार यह विद्रोह नहीं क्रांति थी।

इस क्रांति के मूल में शामिल सैनिक ब्रिटिष सरकार द्वारा बंगाल आर्मी के लिए एक ऐसे इलाके से भर्ती किए गए सैनिक थे जो कि हिंदी भाषा बोलते थे। इस सेना मे शामिल उत्तर प्रदेष, पष्चिमी बिहार तथा हरियाणा के इलाके के थे। इनकी संख्या सवा लाख के करीब थी। इस सेना के बारे में एक और बात यह थी कि सेना जातिगत आधार पर भर्ती की गई थी। इसमें ब्राहमणों का एक बहुत बड़ा हिस्सा शामिल था। अतः बंगाल आर्मी में उंची जाति के लोग शामिल किए गए थे। यह माना गया कि वे षिक्षित और अनुषासनबद्ध होंगे।

इस आधुनिक सेना के सिपाहियों की दो महत्वपूर्ण विषेषताएँ थीं। वे जाति और धर्म के मामले में अति–संवेदनषील तो थे, लेकिन सांप्रदायिक नहीं थे। इसलिए चिकनाई युक्त कारतूसों को स्वीकार करना सिपाहियों के लिए खास तौर पर मुष्किल था। उनके लिए जाति खास तौर पर महत्वपूर्ण थी। उन्हे तुच्छ नस्ल का आदमी मानकर उनका अपमान किया जाता था। ब्रिटिष सरकार गाय तथा सुअर की चर्बी का कारतूसों में प्रयोग कर भारतीयों के अभिमान को मिटाना चाहती थी।

दूसरी ओर जिस इलाके से इनमें से ज्यादातर सिपाही आये थे, उसे देष में सबसे ज्यादा कर वसूल किए जाने वाले इलाके में तबदील कर दिया गया था। 1822 में किसान जनता को और गॉव के जमींदार को भी महालवाड़ी व्यवस्था के अंतर्गत करों के लगातार बढ़ते बोझ की मार झेलनी पड़ रही थी। उस समय तक खुद बंगाल स्थायी

बंदोबस्त के अंतर्गत आ चुका था, जहॉ भू–कर स्थायी रूप से तय कर दिया गया। अगर कोई किसान या भू–स्वामी कर भर देता लेकिन उसका पड़ोसी कर नहीं भर पाता तो सरकार कर देने के बावजूद उसकी जमीन जब्त कर सकती थी।

वजह चाहे कोई भी हो मगर यह निष्चित रूप से कहा जा सकता है कि बंगाल आर्मी ने बगावत कर दी थी। इस विद्रोह की शुरूआत सबसे पहले बंगाल में दमदम में 1857 की जनवरी में हुई थी। फिर मार्च में बैरकपुर में मंगलपांडे ने अवज्ञा की पहली साहसपूर्ण कार्यवाही की। इस आग की लपटें मई के शुरू में ही लखनऊ तक पहुंच चुकी थीं और फिर विद्रोह मेरठ में भी फूट पड़ा। मेरठ के सिपाहियों ने दिल्ली पर कब्जा कर लिया।

विद्रोही सैनिकों को तुरंत असैनिक आबादी के बीच से समर्थन मिलने लगा था। जिन इलाकों से इन सिपाहियों को भर्ती किया गया था, वहॉ फौरन विद्रोहियों के लिए सहानुभूति की व्यापक लहर उठी थी और अन्य वर्ग भी बगावत के लिए उठ खड़े हुए। इस विद्रोह में शहरों के लोग भी शामिल हुए थे। दिल्ली, लखनऊ, बरेली, कानपुर, झांसी तथा अन्य शहर प्रतिरोध के मजबूत केंन्द्र बन रहे थे।

इस संग्राम में हिन्दू–मुस्लिम एक होकर लड़े। हालांकि अंग्रेजों ने उन्हे आपस में लड़वाने का बहुत प्रयास किया। बरेली में विद्रोहियों के प्रमुख नेता बहादुर खान ने हिन्दू सरदारों के नाम एक अपील छाप कर उनसे अंग्रेजों के खिलाफ लड़ाई में शामिल होने की अपील की थी। इस अपील में उन्होने हिन्दू रीति–रिवाजों तथा मान्यताओं पर अंग्रेजों के प्रहारों को सूचीबद्ध किया था और मुसलमानों की तरफ से यह पेषकष की थी कि वे गोमांस खाना पूरी तरह से छोड़ने के लिए तैयार हैं।

इसके अतिरिक्त 1857 की क्रांति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण के रूप में लॉर्ड डलहौजी की 'गोद निषेध प्रथा' या 'हड़प नीति' को माना जाता है। डलहौजी ने अपनी इस नीति के अंतर्गत सतारा, नागपुर, झॉसी, बरार आदि राज्यों पर अधिकार कर लिया था, जिसके परिणाम स्वरूप इन राजवंषो में अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ असन्तोष ब्याप्त हो गया। कुषासन के आधार पर डलहौजी ने हैदराबाद तथा अवध को अंग्रेजी साम्राज्य के अधीन कर लिया जबकि इन स्थानों पर कुषासन फैलाने के जिम्मेदार स्वंय अंग्रेज ही थे। पंजाब और सिंध का विलय भी अंग्रेजी हुकूमत ने कूटनीति के द्वारा अंग्रेजी साम्राज्य में कर लिया, जो कालांतर में विद्रोह का एक कारण बना। पेंषनों एवं पदों की समाप्ति से भी अनेक राजाओं में असंतोष ब्याप्त था। नाना साहब को मिलने वाली पेंषन को डलहौजी ने अपनी नवीन नीति के द्वारा बंद करवा दिया।

कहने के लिए तो ब्रिटिष सत्ता धर्म के मामले में तटस्थ थी, पर उसने ईसाई धर्म के प्रचार में अपना पूर्ण सहयोग दिया। ईसाई मिषनरियों का दृष्टिकोण भारत के प्रति बड़ा तिरस्कार पूर्ण था। उसका एकमात्र उद्देष्य भारत में अपनी सर्वोच्चता प्रदर्षित करना था। अंग्रेज अपनी नीति के अनुसार अधिकांष भारतीयों को ईसई बनाकर भारत में अपने साम्राज्य को सुदृढ़ करना चाहते थे।

अंग्रेजों की अनेक नीतियॉ तथा कार्य ऐसे थे जिनसे भारतीयों में असंतोष की भावना जन्म लेने लगी थी। अंग्रेजो को अपनी 'ष्वेत चमड़ी' पर बड़ा नाज था और वे भारतीयों को 'काली चमड़ी' कहकर उनका उपहास किया करते थे। विलियम बैंटिक ने अपने शासन काल में सती प्रथा, बाल हत्या, नर हत्या आदि पर प्रतिबंध लगाकर डलहौजी के विधवा विवाह को मान्यता देकर रूढ़िवादी भारतीयों में असंतोष पैदा कर दिया। षिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजों ने पाष्चात्य सभ्यता, संस्कृति, भाषा एवं साहित्य के विकास पर अधिक ध्यान दिया।

प्रयास के बावजूद भी यह क्रांति सफल ना हो सकी। इसकी असफलता के अनेक कारणों में से एक प्रमुख कारण था राष्ट्रीयता की भावना तथा नेतृत्व का अभाव–जो इस संग्राम में स्पष्ट दृष्टि–गोचर हुआ। भारतीयों में आपसी मतभेद उभर कर आया तथा देषी रियासतों में से अनेक अपने स्वार्थ वष अंग्रेजों का साथ देने को तैयार हो गए तथा उन्होने इस संग्राम को कुचलने में अपना पूर्ण सहयोग दिया। हालांकि यह संग्राम असफल रहा किंतु इसके उनके परिणाम निकले। इसके पष्चात् ही भारतीयों में एकता की भावना का पूर्णतः विकास हुआ। हिन्दू–मुस्लिम एक हो गए। ईस्ट इण्डिया कंपनी का भारत पर अधिकार समाप्त हो गया तथा भारत का शासन सीधे महारानी विक्टोरिया के हाथ में आ गया। इसके पष्चात् आरंभ होता है ब्रिटिष सरकार द्वारा भारतीयों का आर्थिक शोषण।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. लोक चेतना में स्वाधीनता की लय– आकांक्षा यादव
2. स्वाधीनता सेनानी लेख– आषारानी वोरा
3. 1857 का मिथक और विरासत – वीरेन्द्र यादव
4. 1857 का स्वतंत्रता समर– विनयक दामोदार सावरकर
5. 1857 इतिहास, कला, साहित्य– मुरली मनोहर प्रसाद